International Journal of Information Movement Vol.I Issue VIII (December 2016)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 67-73

मनोहर श्याम जोशी के उपन्यासों में उत्तर आधुनिक राजनीतिक परिदृश्य

मान सिंह
शोधछात्र, पीएच.डी. (हिन्दी)
हिन्दी भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

मनोहर श्याम जोशी चूंकि लेखक होने के साथ एक सक्रिय पत्रकार भी थे तथा वह दृश्य–श्रव्य माध्यमों में निरन्तर सक्रिय भी रहे। ऐसे समय में समकालीन रचनात्मक एवं वैचारिक संकटों से वह दो चार होते हैं। उत्तर आधुनिकता 'विचारधाराओं के अन्त' की घोषणा के साथ विचारधाराओं की समाप्ति की सूचना देती है। विचारधाराओं की समाप्ति का कारण साम्यवाद से मोहभंग था। डेनियल बेल विचारधाराओं के अन्त को साम्यवाद से मोहभंग का प्रतिफलन मानते हैं। ''साम्यवाद से मोहभंग और विलुप्त स्वर्ण के अहसास ने हर प्रकार की वैचारिक प्रतिबद्धता को संदिग्ध बना दिया है। मार्क्सवाद/प्रगतिवाद के पतन की बात लगभग स्वीकार हो चुकी है। साम्यवादी उपासनागृहों की तमाम मूर्तियाँ या तो खंडित हो चुकी हैं या संग्रहालयों में पुरावस्तु या अवशेष के रूप में रख दी गई हैं।''[1] अंतवाद के इस क्रम में पार्टिजन रिव्यु 'राजनीति का अंत' की घोषणा करते हैं। विचारधारा के अंत में राजनीतिक सिद्धान्त एवं विचार अपनी अर्थसत्ता खो बैठे हैं। एक सर्वमान्य राजनीतिक विचारधारा का अभाव ही उत्तर आधुनिक युग का संकेत है। भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों के प्रभाव, लोकतंत्र पर गहराता संकट, वंशवाद, अपराधीकरण, मीडिया द्वारा राजनीति गतिविधियों को एपिसोड बनाकर भुनाना, समाजवाद का खोखला रूप, साम्यवाद की टूटन को अनुभव किया जा रहा है। राजनीति के इन विभिन्न घटकों को उत्तर आधुनिकता व्याख्यायित करती है।

मनोहर श्याम जोशी के राजनीतिक सम्बन्धी विचार उनके रचनाकर्म एवं लेखों में तीखे तेवरों के साथ मिलते हैं। 'नेताजी कहिन' इसी प्रकार की अभिव्यक्ति का सटीक उदाहरण है। अपने लेखों में वह भारतीय राजनीति एवं राजनेता पर वह जमकर बरसे हैं। समकालीन राजनीतिक परिदृश्य पर वह टिप्पणी करते हुए लिखते हैं–''समसामयिक भारतीय राजनीति की एक यही विशिष्टता उभरकर सामने आती है कि वह मरो–मारो का नारा देती है मगर अपना सिर सलामत रखना चाहती है। वह परिवर्तन का आह्वान करती है लेकिन यथास्थिति उसे प्रिय है। वह सत्तावान होने का दम भरती है, लेकिन उसे सुख सत्ता की दलाली में ही मिलता है। वह राजनीति अपना अधिकांश समय सत्ता की होड़ के दाँव–पेंचों में बिताती है। जब कभी इन दाँव–पेंचों से फुर्सत मिलती है या इनकी खातिर ही ऐसा करना जरूरी हो जाता है, वह लोगों को उनकी सारी तकलीफें मिटा देने का कोई आसान–सा नुस्खा समझा देती है। मिसाल के लिए अपना अलग राज्य बनवा लो, अपने राज्य से दूसरे राज्यों वालों को निकाल बाहर करो, अपने लिए अलग जिले की स्थापना करा लो जिसमें तुम्हारा बहुमत हो, विधर्मियों का नाश कर दो, मालिकों को घेर लो, मुख्यमंत्री बदलवा दो, भाषा के लिए लड़ मरो। इस तरह के नुस्खे हमेशा किसी ऐसी समस्या को ध्यान में रखकर पेश किए जाते हैं जो किसी विशिष्ट सामाजिक या आर्थिक तनाव के कारण पैदा हुई हो और जिसका समाधान करने का नैतिक साहस और राजनीतिक कौशल नेताओं के बूते का न हो।''[2]

मनोहर श्याम जोशी के उपन्यासों में राजनीति में आ रहे सभी तरह के बदलावों चाहे वह सकारात्मक हो या नकारात्मक उनकी अभिव्यक्ति किसी न किसी रूप में अवश्य मिलेगी। यद्यपि उनके अधिकांश उपन्यास सीधे–सीधे राजनीतिक विषयवस्तुओं को आधार बनाकर नहीं लिखे गए हैं फिर भी समाज एवं राजनीति के टकराव से वह अछूते नहीं हैं। राजनीति से जुड़े विभिन्न मुद्दों को वह अपने लेखों में उठाते हैं तथा भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के प्रति आक्रोश एवं तिलमिलाहट उनके लेखन पर हावी रहती है। 'सावधान! लोकतंत्र खतरे में है'! लेख में उन्होंने लोकतंत्र के बदलते स्वरूप पर बेबाक टिप्पणी की है। वह लिखते हैं– ''बाजारू लोकतंत्र में हर नेता और दल का एक ही लक्ष्य रहता है–पैसा कमाना।

पैसा कमाने के लिए सत्ता का दुरूपयोग करना और जनहित की बलि देना जरूरी हो जाता है जबकि लोकतंत्र उस सामन्ती व्यवस्था को धराशायी करने के लिए ही मैदान में उतरा था जिसमें राजा–महाराजा प्रजा की पूरी तरह से उपेक्षा करते हुए जमकर भोग–उपभोग करते थे। सत्ता–प्रेम की इस प्रवृत्ति के चलते विचारधारा का महत्व दिन–पर–दिन गौण होता चला जा रहा है। राजनीतिक दलों के बारे में वही स्थिति बनती चली जा रही है कि जैसे साँपनाथ वैसे नागनाथ।''[3]

उनके उपन्यासों में राजनीतिक घटनाओं एवं मुद्दों को उठाया गया है। 'क्याप' उपन्यास में राजनीतिक विमर्श को न केवल विशिष्ट स्थान मिला है अपितु वह अपने स्वरूप में वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य का एक सजग पोस्टमार्टम है। इस उपन्यास में राजनीति और सत्ता की सभी कमजोरियाँ तथा राजनीति में आए बदलाव दिखाई देते हैं। यद्यपि यह उपन्यास संसदीय या उच्च स्तरीय राजनीति पर केन्द्रित नहीं है किन्तु अपने स्थानीय राजनीति के कलेवर में भी भारतीय राजनीति की मूल चुनाव प्रणाली, वोट बैंक की राजनीति, राजनीति का अपराधीकरण, प्रशासन एवं राजनीति के गठबंधन आदि इन सभी का चित्रण करता है।

डा॰ कृष्णदत्त पालीवाल 'क्याप' में वर्णित राजनीतिक परिवेश के सम्बन्ध में लिखते हैं– ''क्याप' आधुनिक–उत्तर आधुनिक भारत की राजनीति का नरक सामने लाने वाला उपन्यास है। सांस्कृतिक पतन और छिछोरेपन, टुच्चेपन–लुच्चेपन का अनुभव सिद्ध–अनुभूतिबद्ध दिलचस्प इतिहास। हर जगह कबीर से आगे का व्यंग्य। बौद्धिकों की स्थिति का भंडाभोड़ और विचारधाराओं का भीतरी सच। डूम लड़का और ब्राह्मण लड़की की प्रेमकथा की उत्तर–आधुनिक पीड़ा। मार्क्सवाद को पछाड़कर उभरता अम्बेडकरवाद और दलित–राजनीति का भविष्य–पुराण। पुलिस और भू–माफिया गठबंधन के कारण हर मोर्चे पर तबाही और हत्याएँ। हिंसा–गुंडागर्दी, जातिवाद के गठन बंधन से उत्पन्न अराजकतावाद। पहाड़ी आंचलिकता की लय से बँधा इतिहास–भूगोल और अंग्रेज के आने से संस्कृति की देशी लय का विनाश और तबाही लाने वाले 'प्रगति' और 'विकास' भरी पश्चिम आधुनिकता।''[4]

इस प्रकार 'क्याप' राजनीति की लम्पटता के कई चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करता है। उत्तर आधुनिक राजनीतिक परिदृश्य को इनके उपन्यासों में निम्न बिंदुओं के आधार पर अभिव्यक्त किया गया है–

राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं स्वार्थ :

मनोहर श्याम जोशी अपने उपन्यासों में राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं स्वार्थ की पोल खोलते हैं। 'क्याप' उपन्यास भ्रष्टाचार एवं स्वार्थ से लैस राजनीतिक परिदृश्य को उभारता है। राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार को इंगित करते हुए वह लिखते हैं– ''हर कहीं सत्ता और भ्रष्टता पर्याय बनते जा रहे हैं। सत्ता हथियाने वाला न्यायपालिका, पुलिस, दफ्तरशाही सब पर अपनी चौधराहट कायम करके और सबको भ्रष्ट बनाकर शासक पर लगे उन तमाम अंकुशों की अवहेलना कर पाता है, जिन्हें लोकतंत्र में आज नागरिक के अधिकारों की रक्षा के लिए जरूरी समझा जाता रहा है।''[5] चुनाव के समय राजनेताओं द्वारा किए जाने वाले वायदे, चुनाव जीतने पर धूल धूसरित हो जाते हैं और रह जाता है भयावह भ्रष्टाचार।

'कसप' उपन्यास में इसी स्थिति को उठाया गया है। इसे स्पष्ट करता उदाहरण दृष्टव्य है– ''किन्तु यह नए भारत का गाँव है। गाँववालों ने उसे अफसर समझा है। उनके पास भ्रष्टाचार की शिकायतें हैं। उनमें राजनीतिक गिरोहबन्दी है। उनकी बातें नल–टंकी न लगने, बिजली न आने बेईमान छोटे अफसरों और सिप्पेबाज लोगों की मिलीभगत से सरकारी सहायता का समान वितरण न होने के सम्बन्ध में हैं– बेईमानी ऐसी आग लग रछे, के क्योई वीक! बिजुई खाम्ब लगे गेई, बिजुई आई ने। टैंकी बणिये राखी। खाली पड़ी छू जब सीमेण्ट मिलौल तबै के होल। ...ये सब गंगोलीहाट वाली कुमाऊँनी बोल रहे हैं, जिसके उच्चारण का गाढ़ापन यहाँ के लोगों को प्रीतिकर और बाहर वालों को विचित्र लगता है। 'हला' वाली प्रीतिकर बोली बोलने–सुनने के बावजूद देवीदत्त को अच्छा नहीं लग रहा है। इस बोली में भ्रष्ट राजनीति बोल रही है।''[6]

सरकारी अधिकारी और सत्ता के गठजोड़ को उपन्यास में वर्णित किया है। सरकारी अधिकारी सत्ता के संरक्षकों की सहायता से लाभ का पद पाते हैं। इस संदर्भ को उद्घाटित करता उदाहरण दृष्टव्य

है– ''वह विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं में बहुत काम करती रही है बराबर और आज वह साहित्य–कला आदि की अन्यतम संरक्षिका और स्त्रियों तथा निर्धनों के हित कार्य करने वाली नेत्री के रूप में ख्यात है। संसद–सदस्या रह चुकी है एक बार। वह सत्तारूढ़ दल से सम्बद्ध है किन्तु विचारों से थोड़ी वामपन्थी समझी जाती है। मैत्रेयी– पति श्यामसुन्दर सरकारी नौकरी में बराबर उन्नति करते रहे हैं। यह संयोग है या शायद उनकी पत्नी के राजनीतिक सम्पर्कों का चमत्कार कि उन्हें ज्यादातर ऐसे पद मिलते रहे हैं जिनका कलाओं के सरकारी संरक्षण से कोई सम्बन्ध हो।''[7]

मनोहर श्याम जोशी के अनुसार– ''भारतीय राजनीति ने समाज की जगह भीड़ और सामाजिक चेतना की जगह स्वार्थ प्रतिष्ठित कर दिया है। भीड़ विध्वंस कर सकती है और राजनीति के इशारों पर, राजनीतिक नेतृत्व की स्वार्थ–सिद्धि के लिए वह यही काम बराबर करती आई है।''[8]

'क्याप' उपन्यास में राजनेताओं की इसी स्थिति का चित्रण है। उपर्युक्त संदर्भ को व्याख्यायित करता हुआ उदाहरण प्रस्तुत है– ''तो हमारी बिरादरी इसलिए अपने को धन्य मान रही थी कि भवानीदत्तज्यू हमदर्दी जताने के लिए स्वयं चले आये हैं। मानों इतना ही काफी न हो, वह कफन के लिए अपनी एक फटी–पुरानी पंखी भी लाए हुए थे। मुझे उनका यह सहानुभूति–प्रदर्शन बहुत दुखदायी लगा क्योंकि कका की सोहबत में इतना तो मैं जान ही गया था कि भवानीदत्तज्यू और दूसरे बामण हमारे हमदर्द बने केवल इसलिए घूम रहे हैं कि हमारे वोट पा सकें।''[9] भ्रष्टाचार में होने वाले घोटाले आमजन की कमर तोड़ रहे हैं। आम आदमी अपनी मूलभूत आवश्यकताएं तक पूरी नहीं कर पाता और राजनेताओं के पास आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली वस्तुओं के अतिरिक्त उनके विकल्पों की एक लम्बी फेहरिस्त होती है। इस स्थिति को लेखक उपन्यास में इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं– ''मेरे दाहिने हाथ में तना हुआ रिवॉल्वर उस नेता–विशेष की ओर तनने लगा और ठांय–ठांय करने से पहले कुछ अप्रीतिकर प्रश्न करने लगा। यथा भाई मेरे, तेरा सरकार पर हवाई जहाज, टेलीफोन, बंगले वगैरह का जो लाखों–कराड़ों का बकाया निकलता है उसे दे क्यों नहीं देता? जब तेरे इलाके में लाखों गरीब लोग बिना दवा–दारू के मर रहे हैं तब तू अपना दूसरा पाँव कब्र में न लटकने देने की खातिर सरकार का करोड़ों रूपया खर्चा कराकर विलायत के अस्पतालों में क्यों पड़ा रहता है? हरामज़ादे तूने जो अरबों घोटालों में कमाये हैं उनमें से कुछ करोड़ गरीबों में क्यों नहीं बांट देता?''[10]

इस प्रकार मनोहर श्याम जोशी राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं स्वार्थ को उपन्यासों के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। इस अभिव्यक्ति में वह समाज के यथार्थ को सामने रखकर एक प्रश्न राजनीति की पारदर्शिता पर लगाते हैं।

जातिवाद को बढ़ावा देती राजनीति :

भारतीय समाज में जातिवाद की समस्या एक नासूर की भांति बढ़ रही है। जातिवादी व्यवस्था प्रत्येक सामाजिक संरचना की रीढ़ होती है। उसके आधार पर पहले व्यवसाय तथा आज गली, मोहल्ले, कालोनियाँ एवं गाँव का अस्तित्व कायम है। राजनीति में जातिवाद का एक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया जाता है। जातिवाद की वैसाखी के सहारे ही वोट बैंक आगे बढ़ पाता है। ''जाति को अपने दायरे में खींचकर राजनीति उसे अपने काम में लाने का प्रयत्न करती है। दूसरी ओर राजनीति द्वारा जाति या बिरादरी को देश की राजनीतिक व्यवस्था में भाग लेने का मौका मिलता है।''[11] जातिवाद राजनीति का आधार बनता जा रहा है। किसी क्षेत्र के प्रतिनिधि विशेष के गुण–दोषों पर विचार न करके उसे जातीय आधार पर वरीयता प्रदान की जाती है इस प्रकार राजनीति निष्पक्ष न रहकर जातीय आधारों में बट रही है। मनोहर श्याम जोशी जातिगत राजनीति की फैलती जड़ों के विषय में कहते हैं– ''बहरहाल जो लोग इस उपलब्धि को भी नकारना चाहते हों वे यह कह ही सकते हैं कि इस तथाकथित सामाजिक क्रांति से केवल इतना हुआ है कि समाज, शासन, राजनीति तीनों में जातिवाद बढ़ा है और परम्परागत जातिवाद न आधुनिकता का वाहक बन सकता है और न सच्चे लोकतंत्र का। उनकी आलोचना सिर–आँखों पर लेकिन जातिवादी किस्म का ही सही, क्षेत्रीयता से ग्रस्त ही सही, हमारे यहाँ लोकतंत्र चल तो रहा है जबकि

गिने–चुने अपवादों को छोड़ बाकी सभी गैर–यूरोपीय देशों में लोकतंत्र या तो कभी लागू हुआ ही नहीं या हुआ भी तो ज्यादा दिन चल नहीं पाया।''[12]

मनोहर श्याम जोशी 'क्याप' उपन्यास में जातिगत राजनीति का कच्चा चिट्ठा खोलते हैं। उपन्यास में 'कस्तूरीकोट' जिसका नाम ''वाल्मीकिनगर कर देने का औचित्य यह है कि यह अनुसूचितों का इलाका है''[13], में जातिगत राजनीति को यथार्थ के धरातल पर वर्णित किया गया है। उपन्यास में डूमों और सवर्णों की राजनीति में जातिगत दाँव–पेचों का पर्दाफाश किया है। इस संदर्भ को उद्घाटित करता उदाहरण दृष्टव्य है– ''फिर मुझे यह सूचना दी गयी कि समभक्त पार्टी ने मेधातिथि को नया राज्य बनने से पहले ही इस इलाके का सर्वेसर्वा पुलिस अधिकारी बनाकर भेज दिया है ताकि अम्बेडकर भक्तों को दबा सके और रामभक्तों को चढ़ा सके।''[14]

अपने लेख 'सावधान! लोकतंत्र खतरे में है' में मनोहर श्याम जोशी जातिवाद को राजनीति के संदर्भ में व्याख्यायित करते हुए उसे समसामयिक संदर्भों से जोड़ते हैं– ''उत्तर भारत में कांग्रेस–विरोधियों ने पहले अन्य अगड़ी जातियों को मिलाकर जीत के फार्मूले बनाये फिर 'अन्य पिछड़ी जातियों' की ओर उनका ध्यान गया। प्रतिपक्ष की इस चुनौती का मुकाबला करने के लिए कांग्रेस ने जल्दी ही एक विजयी नुस्खा निकाल दिया। उसने ब्राह्मणों, दलितों और मुसलमानों का गुट बनाया और थोड़े–से अन्य सवर्णों को साथ लिया। दक्षिणी और पश्चिमी राज्यों में राजनीति में जिन अन्य पिछड़ी जातियों का बोलबाला हो चुका था, वहाँ कांग्रेस को ही अन्य पिछड़ी जातियों का दल बना दिया गया। उत्तर भारत में इधर कांग्रेस की हार होती रही है तो इसलिए कि दलित बसपा के साथ चले गये हैं और मुसलमान पिछड़ी जाति वाली पार्टियों से मिल गये हैं। जातीय और साम्प्रदायिक आधार पर राजनीति का ध्रुवीकरण अब हमारे यहाँ बहुत तेजी से जोर पकड़ रहा है और मतदाता–समूह अधिकाधिक छोटे–छोटे समूहों में बँट रहा है।''[15]

भारतीय राजनीति में जातिवाद को बढ़ावा आरक्षण नीति के तहत भी मिल रहा है। राजनेता बोटबैंक बढ़ाने के लालच में आरक्षण का मुद्दा गरमाए रखते हैं। वह पिछड़ी जातियों एवं दलितों को आरक्षण का लाभ दिलाकर उनके वोटों से स्वयं भी लाभान्वित होते हैं। मनोहर श्याम जोशी 'कोटा है पर न्याय में टोटा है' लेख में इस विषय पर लिखते हैं– ''दूसरी ओर आरक्षण की राजनीति भी बदस्तूर चलती रही है क्योंकि हमारे नेताओं के अनुसार सामाजिक दृष्टि से दलितों और पिछड़ों को आर्थिक ओर सामाजिक न्याय दिलवाने का एकमात्र अचूक उपाय आरक्षण है। इसीलिए वर्तमान सरकार के न्यूनतम साझा कार्यक्रम में आरक्षण को निजी क्षेत्र में भी लागू करवाने की बात कही गई थी। इस दिशा में पहला कदम उठाते हुए सरकार ने अब निजी शिक्षण संस्थाओं में दलितों और पिछड़ी जातियों के लिए 25 प्रतिशत आरक्षण करवाने का विधेयक तैयार कर डाला है। जब से नेताओं की समझ में यह आया है कि इस देश में आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी आबादी में मुसलमान भी बड़ी तादाद में मौजूद हैं तब से उन्हें आरक्षण देने की बात चल निकली है। पिछड़ी जातियों को आरक्षण दिलवाने के बाद से अब तक जिस तरह की राजनीति हमारे यहां होती रही है उससे यही संकेत मिलता है कि हमारे नेताओं के लिए आरक्षण सामाजिक अन्याय से लड़ने से कहीं ज्यादा वोट बैंक जुटाने का उपाय है।''[16]

राजनीति का अपराधीकरण :

आज के समय में अपराध की राजनीति और राजनीति में अपराधिक तत्वों की अधिकता है। ''पहले राजनीति का अपराधीकरण हुआ। अब अपराध का राजनीतिकरण होने लगा है।''[17] स्वतंत्रोत्तर भारतीय राजनीति के प्रारम्भिक दशक में पाकिस्तान–भारत के केन्द्रित देश विभाजन की त्रासदियों का जिक्र होता है तो छठे सातवें दशक में भारतीय राजनीति से मोहभंग की ओर राजनीति परिदृश्य से निराशा का चित्रण मिलता है। साठोत्तरी उपन्यासों में चीन–भारत युद्ध से लेकर सातवें दशक के अंतिम चरण के उपन्यासों में आपातकाल और तद्जन्य प्रभावों का उल्लेख भी मिलता है किन्तु आठवें दशक और 21वीं सदी के पहले दशक के उपन्यास भारतीय राजनीति में अपराधीकरण के विभिन्न चेहरे और रूप प्रस्तुत करते हैं जैसे महाभोज (मन्नू भण्डारी), इन्हीं हथियारों से (अमरकान्त) करवट (अमृतलाल नागर), कालकथा (कामतानाथ), सूखा बरगद (मंजूर एहतेशाम) आदि। मनोहर श्याम जोशी के उपन्यास भी राजनीति के

अपराधीकरण और उसके प्रभावों से लोकतांत्रिक व्याख्या को पहुँचने वाले आघात से अछूते नहीं हैं उन्होंने पत्रकारिता में रहते हुए भारतीय राजनीति के इस विद्रुप को बहुत नजदीकी से देखा और उन पर तात्कालिक टिप्पणियाँ भी की। उनके वैचारिक लेखन में भी भारतीय राजनीति में आए इन बदलावों को फोकस किया गया है। वैचारिक लेखन के साथ–साथ उनके उपन्यासों में भी अपराधीकरण की समस्या की तह में जाने का सफल प्रयास हुआ है।

'क्याप' उपन्यास में राजनीति में आए परिवर्तनों एवं उसमें आपराधिक प्रवृत्ति के बढ़ते ग्राफ को चित्रित किया गया है। राजनीति के अपराधीकरण ने आज के समय में एक विकट समस्या उत्पन्न की है। उपन्यास का पात्र उस व्यवस्था के सम्बन्ध में कहता है– ''गुरू जी अगर आपका नालायक हरकू आपके हिसाब से गुण्डा भी है तो रामध्यानु तो गुण्डे का बौज्यू ठहरा। इसलिए इन्साफ की बात तो यही ठहरी कि आप बड़े गुण्डे की जगह छोटे गुण्डे को जितायें। मैं उस व्यवस्था पर तिलमिला उठा जो लोगों को दो गुण्डों में से किसी एक का चुनाव करने के लिए मजबूर करती है।''[18] उपन्यास में दलित और सवर्णों की जातिगत राजनीति में पनपते अपराध तत्वों और उसके दुष्परिणामों को उजागर किया है। दोनों पक्ष हत्याएँ, लूट तथा अपहरण आदि अपराधिक क्रियाओं में लिप्त रहते हैं। एक दूसरे पर छींटाकशी कर राजनीतिक दांवपेचों में वह उलझे रहते हैं।

राजनीति में पुलिस प्रशासन के गठजोड़ से विकसित होता अपराधतंत्र उपन्यास का वर्ण्य विषय है। इस स्थिति को उजागर करते हुए जोशी जी कहते हैं– ''मेधातिथि हरकु एक हो गये हैं और उन्होंने यहाँ आये पूँजीवादियों के साथ मिलकर माफिया बना ली है जो कानूनी से कहीं ज्यादा गैर–कानूनी उद्योग धन्धे चला रही है। तो मैं अभी क्रान्तिकारी युद्ध शुरू करने की सोच ही रहा था कि मैंने देखा वाल्मीकि नगर उर्फ कस्तूरीकोट में माफिया युद्ध शुरू हो गया है। गैर–कानूनी ढंग से जंगल काटने, खनिज निकालने, जड़ी–बूटियाँ बेच देने और जंगलात की जमीनों पर कब्जा कर लेने का धन्धा चल निकला है और आपस में गोलियाँ भी चलने लगी हैं। गोली से खेली जा रही इस होली में रामध्यानु का बड़ा बेटा मारा गया। फिर किसी ने मेधातिथि के बहनोई की हत्या कर दी, जो मेधातिथि की कृपा से एक स्थानिक उद्यम में सहायक प्रबन्धक का पद पा गया था।''[19] पुलिस प्रशासन का अपराधिक प्रवृत्तियों से गठबंधन आम जन का शोषण करता है। राजनेताओं एवं पुलिस प्रशासन भी गठजोड़ की राजनीति को स्वीकार करते हैं। इस प्रकार से अपराधी तत्वों को प्रशासन से भयभीत होने की आवश्यकता समाप्त हो जाती है। उपन्यास में माफिया सरगना से राजनीतिज्ञ बना रामध्यानु पुलिस प्रशासन की सहायता से अपने अनैतिक कार्यों को चलता रहता है– ''सूचना यह है कि नया पुलिस कप्तान सुनील सिंह रामध्यानु से मिल गया है। पुलिस और माफिया मिलकर हमें मार रहे हैं और लोगों को लूट रहे हैं। दिन–भर जो पैसा ऐंठते हैं, रात को मिलकर उसे उड़ाते हैं। सुनील सिंह रामध्यानु हर रात साथ बैठकर शराब पीते हैं, टाँगे चबाते हैं और टाँगे खोलते हैं।''[20]

राजनीति पर धन और बल का प्रभाव :

उत्तर आधुनिकता ने पूँजी (धन) को महत्ता प्रदान की जिसके फलस्वरूप उपभोक्तावाद का जन्म हुआ। आल्विन टाफलर ने 'पावर शिफ्ट' में शक्ति (बल) के प्रयोग को नवीन संदर्भों में व्याख्यायित किया। धन और शक्ति के प्रयोग का उपभोग सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से जुड़ गया है। ''हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर रहे हैं जिसने 'शक्ति' के नए मार्गों को खोलकर 'पावर' की पुरानी अवधारणा के ढाँचे को तोड़ दिया है। यह नया युग 'पॉवर शिफ्ट' का खेल खेल रहा है।... एक 'ग्लोबल पॉवर स्ट्रक्चर' हमारी अभ्यस्त जीवन–शैलियों को पूरी तरह बदलने की तैयारी कर उठा है। इसके पास इतनी ताकत आ रही है कि मानव–जीवन के हर क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन के लक्षण प्रकट हो रहे हैं। इस 'मैसिव रि–स्ट्रक्चरिंग' में हम पाते हैं कि मानव–इतिहास के पुराने युग का लोप होने को है और 'ए रिवोल्यूशन इन दि वैरी नेचर आफ पॉवर' की स्थिति आ गई है। 'पॉवर शिफ्ट' केवल 'पॉवर'' का रूपान्तरण नहीं है अपितु शक्ति को रूपांतरित करने की नवीन प्रक्रिया है। ज्ञान, धन और हिंसा तीनों मिलकर इक्कीसवीं शताब्दी का दरवाजा खटखटा रहे हैं।''[21]

आपातकाल के बाद की भारतीय राजनीति जातीय, धार्मिक, आपराधिक तथा धन तथा धनबल के प्रभाव से प्रभावित दिखाई देती है। विभिन्न क्षेत्रीय पार्टियों के उदय के पीछे भी अनेक जातीय एवं धार्मिक कारण रहे हैं। नवें दशक से लेकर अब तक की राजनीति में इनका प्रभाव बढ़ता ही गया है। मनोहर श्याम जोशी के उपन्यास लेखन का यही समय है। उनके उपन्यासों में भारतीय राजनीति में आए इन बदलावों की परखा और समझा गया है। जातीय राजनीति के चलते जहां योग्य उम्मीदवारों को असफलता मिलती है वहीं धन–बल का प्रभाव बढ़ने के कारण मतदाताओं को लुभाने के लिए धन के दुरूपयोग में भी कई उदाहरण मिलते हैं।

धन और बल के प्रभावों को राजनीति में अपने ढंग से भुनाया जाता है। बूथ कैप्चरिंग, हस्तान्तरण नीति, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, हत्याएँ आपराधिक प्रवृत्ति पर धन एवं बल के प्रभाव को अनदेखा नहीं किया जा सकता। मनोहर श्याम जोशी 'अर्थव्यवस्था और अनर्थ अनीति' लेख में धन के प्रभावों को राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में रेखांकित करते हुए लिखते हैं– ''सत्तालोलुप राजनीति के अर्थ–नीति पर पूरी तरह हावी हो जाने से वह अनर्थ हुआ जो निठल्ली दफ्तरशाही और दलाली का पोषक बना। लाइसेंस किसे दिया जाएगा, कारखाना कहाँ खुलेगा, कर्मचारी कौन होंगे, 'हमारी माँगों' का नारा बुलंद करके कब हड़ताल करा दी जाएगी... इन तमाम बातों का भारत में अर्थ–नीति से कोई वास्ता नहीं। हर मामला राजनीति का मामला है। राजनीति की अराजकता अर्थव्यवस्था में प्रतिबिम्बित है।''[22]

जोशी जी के उपन्यास 'क्याप' में राजनेताओं द्वारा धन और बल से किए कार्यों का खुलासा किया गया है। डी.आई.जी. मेधातिथि राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण ही हस्तान्तरित होता है और पदोन्नति के रूप में आई.बी. में भेज दिया जाता है– ''वह बोला–गुरूजी वो मेधातिथि आपसे बदला लेने के लिए कोई न कोई कमीनी हरकत जरूर करेगा। वह मेरा बैचमेट रहा है, मैं उसकी रग–रग से वाकिफ हूँ। अब वह क्या है कि आपकी वजह से उसका इतना तगड़ा सोर्स–सिप्पा है कि उसकी यहाँ से बदली की भी गयी तो सीधा आई.बी. में भेजा गया। वह कुछ न कुछ खुराफात जरूर करेगा।''[23] पुलिस प्रशासन एवं राजनेताओं के गठजोड़ से चुनावी दावपेंचों को अंजाम दिया जाता है। 'गुरूजी' नामक पात्र का प्रयोग बोटबैंक बढ़ाने के लिए किया जाता है। इसके लिए उसे पहले गिरफ्तार किया जाता है। इस घटना को अभिव्यक्त करता उदाहरण दृष्टव्य है– ''तीसरे दिन हरकु एक स्थानिक सवर्ण वकील बी.बी. उर्फ बुद्धिबल्लभ जोशी को साथ लेकर आया। हरकु ने हाँफते हुए सूचना दी– अभी–अभी मुझे पता चला कि आश्रम पर छापा पड़ा है और पुलिस कप्तान ने रामध्यानु से सांठ–गांठ करके आपके खिलाफ़ आतंकवाद–अलगाववाद का केस बना दिया है। खैर गुरूजी, घबराने की कोई बात नहीं है मैंने दिल्ली मेधा दाज्यू को फोन कर दिया है। उन्होंने कहा है कि सब सँभाल लेंगे। और यह बी.बी. भी आपको छुड़ाने की कानूनी कोशिश में लगा ही रहेगा।''[24]

राजनेताओं के इशारे पर अपराधियों को मुक्त किया जाना या किसी अपराध के लिए निर्दोष को दोषी साबित करना राजनीति में अर्थ एवं शक्ति की प्रभुत्ता को ही रेखांकित करता है– ''मेरे दिल्ली ले जाये जाने से ऐन पहले पुलिस कप्तान चुपके से मुझे बता गया, घबराने की कोई बात नहीं है गुरूजी! आपके आश्रम में जो गैर–लाइसेंसशुदा असला बरामद हुआ था उसे तो नेताजी के इशारे पर उनके एक चेले ने अपना बता दिया है। मेधातिथि जोशी ने यह दाँव आपको और आपके असली चेले नेताजी को बरबाद करने के लिए खेला है ताकि हरकु चुनाव जीत जाये। लेकिन जीत तो सच्चाई की ही होनी है।''[25]

निष्कर्षतः राजनीतिक स्थिति में आए बदलावों को मनोहर श्याम जोशी अपने रचनाकर्म का हिस्सा बनाते हैं। उनके उपन्यासों में राजनीति परिदृश्य अपने यथार्थ रूप में उजागर हुआ। अपराधीकरण की राजनीति, राजनीति में पनपता भ्रष्टाचार, जातिवाद को प्रश्रय देती राजनीतिक परिदृश्य को उनके उपन्यास बखूबी वर्णित करते हैं।

सदंर्भ सूची :

1. देवेन्द्र इस्सर : आधुनिकता–साहित्य और संस्कृति की नई सोच, पृ॰ 69
2. मनोहर श्याम जोशी : भीड़ में खोया हुआ समाज, पृ॰ 58–59
3. मनोहर श्याम जोशी : 21वीं सदी, पृ॰ 150–151

4. सं॰ कुसुमलता मलिक : गल्प का गुलमोहर—मनोहर श्याम जोशी, पृ॰ 71—72
5. मनोहर श्याम जोशी : 21वीं सदी, पृ॰ 151
6. मनोहर श्याम जोशी : कसप, पृ॰ 293
7. मनोहर श्याम जोशी : कसप, पृ॰ 267
8. मनोहर श्याम जोशी : भीड़ में खोया हुआ समाज, पृ॰ 118
9. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 45
10. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 148
11. प्रो॰ एम॰एल॰ गुप्ता एवं डी॰डी॰ शर्मा : समाजशास्त्र, पृ॰ 839
12. मनोहर श्याम जोशी : आज का समाज, पृ॰ 252
13. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 12
14. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 143
15. मनोहर श्याम जोशी : 21वीं सदी, पृ॰ 149
16. मनोहर श्याम जोशी : आज का समाज, पृ॰ 500
17. सं॰ डॉ॰ अमर सिंह वधान : साहित्य और उत्तर संस्कृति, पृ॰ 35
18. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 122
19. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 127
20. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 129—130
21. कृष्णदत्त पालीवाल : उत्तर आधुनिकता और दलित साहित्य, पृ॰ 13
22. मनोहर श्याम जोशी : भीड़ में खोया हुआ समाज, पृ॰ 147
23. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 130
24. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 133
36. मनोहर श्याम जोशी : क्याप, पृ॰ 134